संस्थापित १८६७ ई०

ओ३म्

आर्य मित्र

साप्ताहिक

आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश का मुख पत्र

एक प्रति ₹ २.००
वार्षिक शुल्क ₹ १००
(विदेश ५० डालर वार्षिक) आजीवन शुल्क ₹ १०००

● वर्ष : १२२ ● अंक : ३३ ● १२ सितम्बर २०१७ भाद्रपद कृष्ण पक्ष सप्तमी संवत् २०७४ ● दयानन्दाब्द १६३ वेद व मानव सृष्टि सम्वत् : १६६०८५३११८

वेदों की शिक्षा ही परिवार का आधार है

– डॉ० धीरज सिंह

वेद प्रचार सप्ताह में आर्य प्रतिनिधि सभा उ०प्र० के प्रधान डॉ० धीरज सिंह आर्य ने बताया कि वेदों की शिक्षा ही परिवार में सुख और शान्ति की स्थापना कर सकती है। अथर्व वेद में स्पष्ट रूप से कई मन्त्रों में यह समझाया गया है कि परिवार को सुखी बनाना है तो –माभ्राता भ्रातरं द्विक्षन् .... जिसका अर्थ होता है कि भाई–भाई आपस में द्वेष न करें बहिने भी बहिनों से आपस में द्वेष न करें आपस में कल्याण करने वाली तथा सुख देने वाली वाणी का प्रयोग करते हुए अपने–अपने व्रतों का पालन करने वाले बनें''। इतना सुन्दर उपदेश वेदों में हमारे कल्याण के लिए हैं यदि हम इसका पालन नहीं करते तो घर–परिवार में विवाद हो जोयेगा और यदि इस नियम का पालन कर परिवार में सुख, शान्ति, स्वास्थ्य, सुन्दरता तथा आत्मीय स्नेह एक दूसरे का सम्मान बढ़ेगा। हम सब यहीं तो चाहते हैं आज कोर्ट में भाई–भाई आपस में मुकद्में कर रहे हैं सम्पत्ति विवाद हो रहे हैं घर का पैसा पानी की तरह बहाकर कर्ज बढ़ा रहे हैं बच्चों की शिक्षा पर ध्यान नहीं देते फिर बच्चे भी उन्हीं संस्कारों से घर में लड़ाई करते हैं। प्रधान जी ने बताया वेदों के आधार पर जब घरों में पालन होता था तब रामायण जैसा वातावरण बनता था। राम लक्ष्मण तथा राम भरत जैसा प्यार और समर्पण देखना है तो आप अपने परिवार के विषय में भी सोचे कि वनवास राम होता है लेकिन लक्ष्मण साथ जाते हैं उनकी धर्मपत्नी माता–सीता भी मना करने पर भी साथ जाती हैं वहाँ के सुख–दुःख को सहन करती हैं। जब भाई भरत को पता चलता है तो वे रामराज्य को स्वीकार नहीं करते अपितु भाई को वापस लाने के लिए वन जाते हैं भाई के मना करने पर उनकी वे चरणपादुका (खडाऊँ) लेकर आते हैं और राजगद्दी पर रख देते हैं स्वयं राम की तरह तपस्वी जीवन जीते हैं पूरे राज्य में जनता की समस्याओं का भी समाधान करते हैं और राम के आने पर राज्य उन्हें सौंपकर उनकी सेवा में लग जाते हैं। वेदों के अनुकूल अपने परिवार को बनाने के लिए तपस्या करनी होगी, वाणी का तप, मन का तप, आत्मा का तप हमारे जीवन और परिवार को रामायण जैसा ही बना देगा यही आर्य समाज चाहता है कि वेदों के अनुसार भाई–भाई से प्यार करे बहिन–बहिन से प्यार करे घर में एक दूसरे का सम्मान करें। अपने स्वार्थ छोड़कर त्यागवृत्ति को अपनायें/महर्षि दयानन्द के स्वपनों को साकार करना है तो आओ वेदानुसार जीवन तथा परिवार बनाओ तभी समाज और राष्ट्र को शक्तिशाली बना सकते है तथा "कृण्वन्तो विश्वमार्यम्" इस वेद वाक्य के आधार पर विश्व को आर्य बनाने का संकल्प सार्थक कर सकते हैं। आप सभी इस वेद प्रचार सप्ताह पर यही संकल्प लेगें, ऐसी मुझे पूरी आशा है।

वेदामृतम्

सि ह्यसि सपत्नसाही देवेभ्यः कल्पस्व, सि ह्यसि सपत्नसाही देवेभ्यः शुन्धस्व
सि ह्यसि सपत्नसाही देवेभ्यः शुम्भस्व[४२] ।। यजु ५.१०

• {हे वाणी! तू} (सिंही) सिंहनी के तुल्य पराक्रमशीला {और} (सपत्नसाही) कामादि शत्रुओं को परास्त करने वाली (असि) है। (देवेभ्यः) {वैयक्तिक} दिव्य गुणों के प्रसारार्थ (कल्पस्व[३]) समर्थ हो। {तू} (सिंही) सिंहनी के तुल्य विदारणशीला {और} (सपत्न–साही) सामाजिक दोषों को दूर करने वाली (असि) है, (देवेभ्यः) {सामाजिक} दिव्य गुणों के प्रसारार्थ (शुन्धस्व[३]) शुद्ध हो। {तू} (सिंही) सिंहनी के समान उद्वेजक {और} (सपत्न–साही) {राष्ट्रीय} शत्रुओं को ध्वस्त करने वाली (असि) है, (देवेभ्यः) {राष्ट्रिय} दिव्य गुणों के प्रसारार्थ (शुम्भस्व[३]) भासित एवं अलंकृत हो।

• वाणी के अन्दर बहुत बड़ी शक्ति निहित है। वाणी के दो रूप होते हैं– एक आन्तरिक वाणी, जो हमारे मन में संकल्प और विचार के रूप में रहती है और दूसरी वह वाणी जिसका हम जिह्वा से उच्चारण करते हैं। वाणी से हम वैयक्तिक, सामाजिक और राष्ट्रीय सपत्नों को विध्वस्त करके दिव्य गुणों का प्रसार कर सकते हैं। हे मेरे मन की आन्तरिक वाणी! तू सिंही है, सिंहनी के समान पराक्रशीला है। तू अपना पराक्रम दिखा। तू मन में उठने वाले शत्रु–रूप काम, क्रोध, ईर्ष्या, द्वेष आदि के आसुरी विचारों से द्वन्द्व–युद्ध करके उन्हें परास्त कर सकने वाली है, अतः उन्हें परास्त कर। उनकी पराजय के पश्चात् फिर तू मनोभूमि में ईश्वर–विश्वास, सत्य, न्याय आदि के सद्–विचारों को प्रसारित कर। इस प्रकार वैयक्तिक मनोराज्य को अकंटक करके सद्गुणों की सुगन्ध से महका दे।

हे समाज के साधु–सन्तों की वाणी! हे समाज के सद्गुरुओं की वाणी! हे समाज–सुधारक परिवाट् सन्यासियों की वाणी! तू भी सिंही है, सिंहना के तुल्य विदारणशीला है। तू अपने तीक्ष्ण शब्दमय पंजों और दांतों से समाज में फैली हुई कुरीतियों का विदारण कर। बाल विवाह, बहुविवाह, विधवा–उत्पीड़न, दहेज–प्रथा, मद्य–पान, नशा–सेवन, छुआछूत, घूसखोरी, कम–तोल, मिलावट और सामाजिक बुराइयों पर तीव्र प्रहार करके उनका समूल उन्मूलन कर दे। इसके पश्चात् पवित्र वातावरण तैयार हो जाने पर तू समाज को गुणग्राहिता के चन्दन–लेप से और पारस्परिक प्रीति, वर्णाश्रम की मार्यादा के पालन, धर्मोत्थान आदि के सौरभ से सुगन्धित कर। पर हे वाणी! ऐसा तू तभी कर सकेगी, जब तू स्वयं को स्वार्थ आदि की अपवित्रता से शुद्ध कर लेगी।

हे राष्ट्र की वाणी! हे सम्राटों की वाणी! हे राज्याधिकारियों की वाणी! तू राज–नियमों, राजकीय घोषणाओं, राजकीय अधिनियमों आदि के रूप में प्रकट होती है। तू भी सिंही है, सिंहनी के समान उद्वेजक है। अपराधी तुझसे थर–थर कांपते हैं। तू राष्ट्रीय स्तर के अपराधियों को उद्वेजित कर। तस्कर–व्यापार, राष्ट्रीय करों की चोरी, बिन–टिकट–यात्रा, अपने राष्ट्र के भेद दूसरे राष्ट्र को देना आदि जो राष्ट्रीय दोष प्रजा में घर किये हुए हैं, उन्हें हे राष्ट्र–वाणी! तुझे विध्वस्त करना होगा। उन दोषों को विनष्ट करके फिर तू राष्ट्रवासियों को देश–भक्ति, बलिदान–भावना आदि सद्गुणों से ओत–प्रोत कर। स्वयं को इस महान् कार्य के लिए शक्ति से अलंकृत और भासित कर।

साभार वेदमञ्जरी

डॉ. धीरज सिंह
कार्यवाहक प्रधान/संरक्षक

स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती
मंत्री/प्रधान सम्पादक

सम्पादकीय.....

श्राद्धपर्व अनिवार्यता क्या?

श्राद्धपर्व प्रतिवर्ष १६ दिन के लिए आते हैं और १६दिनों में पूरे देश में जो–जो सज्जन अपने माता–पिता के नाम पर घर बुलाकर पण्डित को भोजन कराते हैं वे समझ लेते हैं कि मैंने अपने मरे हुए माता–पिता आदि की सेवा कर ली अब वे तृप्त हो गए शेष ३६४ दिन के विषय में कुछ नहीं सोचा ऐसा क्यों? क्या उसी तिथि में वर्ष में एक बार भूख लगती है, लगती है तो उसे प्राप्त कैसे करते हैं? पण्डित के पेट में डालने से पहले उसका कुछ अता–पता भी होता हैं या नहीं? कुछ लोग कहते हैं कि इस भोजन के बदले वहां पर भोजन उन्हें प्राप्त हो जाता है उसका पता होना तो अनिवार्य है। बिना पते का लिफाफा न जा सकता न आ सकता। फिर भी पता नहीं चलेगा क्योंकि भोजन तो पण्डित जी के पेट में गया वहां से वापसी का पता कैसे चलेगा? कोई यह भी आवश्यक नहीं वह मनुष्य ही बनेगा यदि साँप बन गया फिर कैसे खायेगा? हाथी बना तो कैसे पेट भरेगा? इस प्रकार के अनेक प्रश्न हैं इनका उत्तर अभी तक सन्तोष जनक प्राप्त नहीं हुआ।

स्वामी भीष्म जी सुनाया करते थे कि मुझे मेरी दादी जी ने कहा कि बेटा जा ऊपर छत पर खीर–पूरी रखकर आ जा, ऊपर जाकर देखा तो सैकड़ो कौए इकट्ठे हो गए, मैं भागकर आया दादी जी इनमें दादा जी कौन से हैं आप पहचान लो मुझे पहिचान नहीं है। यह भी एक प्रश्न है जो अनुत्तरित है। किसी महात्मा जी ने लिखा है कि एक युवक के माता–पिता परिवार में ही पुनर्जन्म लेकर आ गए पर रूप बदल गया पिता तो बैल बन गया और माता जी कुतिया बन गई दोनों सेवा करते रहे श्राद्ध का दिन आया तो दोनों खुश थे आज खीर खाने को मिलेगी लेकिन विपरीत हुआ दोनों प्रतीक्षा ही करते रहे और पण्डित जी खा–पीकर घर चले गए। दोनों ने कहा कि अब क्या करें? बैल ने कहा देखकर आओ रसोई में कुछ है अथवा खाली हो गया कुतिया जैसे ही रसोई की तरफ गई उसकी पिटाई हो गई कमर टूट गई बेचारी आकर बैठ गई सायंकाल तक भूखे रहे दोनों माता–पिता। यह कहानी नहीं यथार्थ है कि असली भूखें हैं और माल पण्डित जी खा रहे हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि उन्हें खाने को नहीं मिलता बीच में दलाली होती है और सारा माल कुड़क हो जाता है इससे ज्यादा भ्रष्टाचार क्या होगा? इसे धार्मिक कृत्य बनाकर जनता का शोषण हो रहा है और जनता प्रसन्नता पूर्वक लुट रही है।

इसका समाधान क्या है? इसका समाधान मात्र आर्य समाज ही है ''इतर था अन्ध परम्परा'' श्राद्धपर्व तो जीवित माता–पिता का ही हो सकता है यह आर्य समाज की मान्यता है इस विषय पर शास्त्रार्थ हुए समाज विजयी हुआ पर सरकार कानून नहीं बनापाई इसलिए यह शोषण बढ़ रहा है पितर शब्द संस्कृत में बहुवचन है अर्थात् माता, ताऊ, दादा, दादी आदि सभी पितर संज्ञक है इनकी श्रद्धा से सेवा करना ही सच्चा श्राद्ध है उनके स्वास्थ्य अनुकूल भोजन ही उनकी आयु बढ़ायेगा उनका आशीर्वाद आपकी आयु बढ़ायेगा दोनों मिलकर परिवार और समाज में श्राद्ध से सेवा करते हुए राष्ट्र को बलवान (मजबूत) बनायेगें। पानी, दूध, भोजन से तृप्त करने को ही तर्पण कहते हैं। पौराणिक लोगों की दुकान चलती रहे इसके लिए आपको मीडिया के माध्यम से बहकाते रहते हैं। आप इनके चक्कर में न आवें भ्रमित न हो ''निर्णय के तट पर'' नामक पुस्तक पढें और भ्रमित जनता का भ्रम दूर कर पुण्य के भागी बनेंगे, ऐसा विश्वास है।

- सम्पादक

गतांक से आगे .....

सत्यार्थ प्रकाश

अथ चतुर्थ समुल्लासारम्भः

अथ समावर्त्तनविवाहगृहाश्रमविधिं वक्ष्यामः

पशूनां रक्षणं दानमिज्याध्ययनमेव चे।
वणिक्पथं कुसीदं च वैश्यस्य कृषिमेव च।। मनु०।।

(पशुरक्षा) गाय आदि पशुओं का पालन–वर्द्धन करना (दान) विद्या धर्म की वृद्धि करने कराने के लिए धनादि का व्यय करना (इज्या) अग्निहोत्रादि यज्ञों का कराना (अध्ययन) वेदादि शास्त्रों का पढ़ना (वणिक्पथ) सब प्रकार के व्यापार करना (कुसीद) एक सैकड़े में चार, छः, आठ, बारह, सोलह, व बीस आनों से अधिक ब्याज और मूल से दूना अर्थात् एक रुपया दिया तो सौ वर्ष में भी दो रुपये से अधिक न लेना और न देना (कृषि) खेती करना। ये वैश्य के गुण कर्म हैं। शूद्र–

एकमेव हि शूद्रस्य प्रभुः कर्म समादिशत्।
एतेषामेव वर्णानां शुश्रूषामनसूयया।। मनु०।।

शूद्र को योग्य है निन्दा, ईर्ष्या, अभिमान आदि दोषों को छोड़ के ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यों की सेवा यथावत् करना और उसी से अपना जीवन–यापन करना यही एक शूद्र का कर्म गुण है।।१।।

ये संक्षेप में वर्णों के गुण और कर्म लिखे। जिस–जिस पुरुष में जिस–जिस वर्ण के गुण कर्म हों उस–उस वर्ण का का अधिकार देना। ऐसी व्यवस्था रखने से सब मनुष्य उन्नतिशील होते हैं। क्योंकि उत्तम वर्णों को भय होगा कि जो हमारे सन्तान मूर्खत्वादि दोषयुक्त होंगे तो शूद्र हो जायेंगे और सन्तान भी डरते रहेंगे कि जो हम उक्त चालचलन और विद्यायुक्त न होंगे तो शूद्र होना पड़ेगा और नीच वर्णों को उत्तम वर्णस्थ होने के लिए उत्साह बढ़ेगा।

विद्या और धर्म के प्रचार का अधिकार ब्राह्मण को देना क्योंकि वे पूर्ण विद्यावान् और धार्मिक होने से उस काम को यथायोग्य कर सकते हैं। क्षत्रियों को राज्य के अधिकार देने से कभी राज्य की हानि व विघ्न नहीं होता। पशुपालनादि का अधिकार वैश्यों ही को होना योग्य है क्योंकि वे इस काम को अच्छे प्रकार कर सकते हैं। शूद्र को सेवा का अधिकार इसलिये है कि वह विद्या रहित मूर्ख होने से विज्ञान सम्बन्धी काम कुछ भी नहीं कर सकता किन्तु शरीर के काम सब कर सकता है। इस प्रकार वर्णों को अपने–अपने अधिकार में प्रवृत्त करना राजा आदि सभ्य जनों का काम है।

विवाह के लक्षण

ब्राह्मो दैवस्तथैवार्षः प्राजापत्यस्तथाऽऽसुरः।
गन्धर्वो राक्षसश्चैव पैशाचश्चाष्टमोऽधमः।। मनु०।।

विवाह आठ प्रकार का होता है। एक ब्राह्म, दूसरा दैव, तीसरा आर्ष, चौथा प्राजापत्य, पांचवां आसुर, छठा गान्धर्व, सातवां राक्षस, आठवां पैशाच। इन विवाहों और सुशील हों उन का परस्पर प्रसन्नता से विवाह होना 'ब्राह्म' कहाता है। विस्तृतयज्ञ करने में ऋत्विक् कर्म करते हुए जामाता को अलङ्करयुक्त कन्या का देना 'दैव'। वर से कुछ लेके विवाह होना 'आर्ष'। दोनों का विवाह धर्म की वृद्धि के अर्थ होना 'प्राजापत्य'। वर और कन्या को कुछ देके विवाह 'आसुर'। अनियम, असमय किसी कारण से वर–कन्या का इच्छापूर्वक परस्पर संयोग होना 'गान्धर्व'। लड़ाई करके बलात्कार अर्थात् छीन, झपट वा कपट से कन्या का ग्रहण करना 'राक्षस'। शयन वा मद्यादि पी हुई पागल कन्या से बलात्कार संयोग करना ''पैशाच''।

इन सब विवाहों में ब्राह्मविवाह सर्वोत्कृष्ट, दैव मध्यम, आर्ष, आसुर और गान्धर्व निकृष्ट, राक्षस आधम और पैशाच महाभ्रष्ट है। इसलिये यही निश्चय रखना चाहिये कि कन्या और वर का विवाह के पूर्व एकान्त में मेल न होना चाहिए क्योंकि युवावस्था में स्त्री पुरुष का एकान्तवास दूषणकारक है। परन्तु जब कन्या व वर के विवाह का समय हो अर्थात् जब एक वर्ष वा छः महीने ब्रह्मचर्याश्रम और विद्य पूरी होने में शेष रहे तब उन कन्या और कुमारों का प्रतिबिम्ब अर्थात् जिस को 'फोटोग्राफ' कहते हैं अथवा प्रतिकृति उतार के कन्याओं की अध्यापिकाओं के पास कुमारों की, कुमारों के अध्यापकों के पास कन्याओं की प्रतिकृति भेज देवें। जिस–जिस का रूप मिल जाय उस–उस के इतिहास अर्थात् जन्म से लेकि उस दिन पर्यन्त जन्मचरित्र का पुस्तक हो उस को अध्यापक लोग मंगवा के देखें। जब दोनों के गुण कम्र स्वभाव सदृश हों तब जिस–जिस के साथ जिस–जिस का विवाह होना योग्य समझें उस–उस पुरुष और कन्या का प्रतिबिम्ब और इतिहास कन्या और वर के हाथ में देवें और कहें कि इस में जो तुम्हारा अभिप्राय हो सो हम को विदित कर देना। जब उन दोनों का निश्चय परस्पर विवाह करने का हो जाये तब उन दोनों का समावर्त्तन एक ही समय में होवे।

क्रमशः अगले अंक में .....

पुराणों को किसने बनाया?

– डॉ. श्रीराम आर्य

साधारणतया पुराण शब्द का अर्थ होता है पुराना या प्राचीन। परन्तु वर्तमान काल में यह शब्द उन अष्टादश ग्रन्थों के लिए रूढ़ि हो गया है, जिन्हें वर्तमान तथाकथित सनातन धर्म में मुख्य शास्त्र माना जाता है, जिसमें भागवतादि ग्रन्थ शामिल हैं।

पौराणिक विद्वानों की मान्यता है कि इन ग्रन्थों की रचाना महर्षि कृष्ण द्वैपायन अर्थात् वेद व्यास जी महाराज ने द्वापर युग के अन्त में की थी, जिसे लगभग ५०६० वर्ष अब तक होते हैं। इसलिए वे लोग निम्न प्रमाण प्रस्तुत करते हैं–

पुराण व्यास जी ने बनाए

अष्टदश पुराणानि कृत्वा सत्यवती सुतः।

(देवी भागवत पुराण, १/३/७)

अर्थात् १८ पुराणों की आस्था पुराण के इस प्रमाण पर इतनी अधिक है कि उनको इस विश्वास से हटाना सरल कार्य नहीं है। कोई कितने भी उत्तम तर्क व प्रमाण इसके विपरीत उनके सामने उपस्थित करे। वे उसे सुनने तक को तैयार नहीं होते हैं।

उनके इस विश्वास का एक आधार यह भी होता है कि समस्त पुराण एवं उप–पुराणों के ऊपर उनके लेखक के स्थान पर 'व्यास कृत' शब्द छपा होता है। सम्पूर्ण सनातनी साहित्य में चाहे वे भाषा में हों अथवा संस्कृत में, गद्य में हों अथवा पद्य में लिखे हों, पुराणों को व्यास कृत ही माना गया है।

अतः किसी भी पुराणों के विश्वासी के लिए यह मानना कि पुराणों को व्यास कृत मानने वाले सारे ग्रन्थकार व विद्वान गलती पर हैं, एक अति दुष्कर बात है।

हम आज इस पुस्तक में वर्तमान सनातनी विद्वानों के इसी दावे को तर्क व प्रमाणों की कसौटी पर परीक्षा करके यह सिद्ध करेंगे कि उनका यह दावा सत्य नहीं है। वरन् सत्य बात यह है कि पुराणों की रचना काल व्यास जी के बहुत बाद का है, उनके बनाने वाले अनेक व्यक्ति रहे हैं अर्थात् सारे पुराण किसी भी एक व्यक्ति की रचनाएं नहीं हैं। पुराणों का रचनाकाल बौद्ध व जैन धर्म के बाद अर्थात् १५०० वर्ष से लेकर अंग्रेजों के भारत के शासन काल तक चलता रहा है। हमारा यह दावा अनुमान पर आधारित नहीं है। वरन् पुराणों के अन्दर ही इस विषय की अन्तः साक्षी विद्यमान है।

पौराणिक विद्वान अपने पुराणों को भी नहीं पढ़ते हैं। अन्यथा उनको अपने दावे को मिथ्या सिद्ध करने वाले प्रमाण पुराणों में ही मिल सकते हैं। १८ पुराणों का कर्त्ता व्यास जी को जहाँ एक स्थान पर बताया गया है, वहां दूसरे स्थल पर लिखा है–

पुराण ब्रह्मा जी ने बनाए

लब्ध विद्येन विधिना प्रजा सृष्टि वितन्वता।
प्रथमं सर्वं शास्त्राणां पुराणं ब्रह्मणा स्मृतम्।।३१।
अनन्तरं तु वक्त्रेभ्यो वेदास्तस्य विनिर्गताः।
प्रवृत्तिस्सर्वं शास्त्राणां तन्मुखाद् भवत्ततः।।३२।।

(शिव पुराण वायु सहिंता, अध्याय १)

अर्थात्– ब्रह्मा जी ने विद्या को प्राप्त हो, प्रजा उत्पन्न करने की इच्छा से सब शास्त्रों के बीच में प्रथम पुराणों को उत्पन्न किया।।३१।।

इसके बाद उनके मुँह से वेद निर्गत हुए। उसके बाद ब्रह्मा के मुँह से सब शास्त्रों की प्रवृत्ति हुई।।३२।। यही प्रमाण मत्स्य पुराण सृष्टि प्रकरण अध्याय ३ तथा वायु पुराण १–६० में भी आता है। इससे सनातनी विद्वानों का दावा मिथ्या हो जाता है कि व्यास जी ने पुराण बनाये थे।

व्यास जी को हुए लगभग ५००० वर्ष होते हैं, वे महाभारत काल में थे, जबकि सृष्टि की रचना हुए लगभग दो अरब वर्ष बीत चुके हैं। इन दोनों प्रमाणों में कौन–सा सच्चा है और कौन–सा झूठा है? यह निर्णय करना सनातनी विद्वानों का काम है न कि हमारा। हम तो दोनों ही प्रमाणों को मिथ्या मानते हैं। अब कुछ और नीवन प्रमाण देखिए–

पुराण पाराशर जी ने बनाए

पुलत्स्य ने वरदान दिया–

पुराण संहिता कर्ता भवान्वत्स भविष्यति।।२६।

(शिव पुराण वायु संहिता, अध्याय १)

अर्थात् हे मैत्रेय! तुम्हारे पूछने से मैं उस सम्पूर्ण पुराण संहिता को तुम्हें सुनाता हूँ, तुम उसे ध्यान देकर सुनो।

इस प्रमाण के अनुसार पुराणों के बनाने वाले व्यास जी ने होकर पराशर जी अर्थात् व्यास जी के पिताजी थे। पुराण का यह प्रमाण पुराणों के व्यास कृत होने के दावे का स्पष्ट खण्डन करता है।

हर द्वापर में नये पुराण बनते हैं

एवं व्यसताश्च वेदाश्च द्वापरे द्विजा।
निर्मितानि पुराणानि अन्यानि च ततः परम्।।३५।।

(शिव पुराण वायु संहिता, अध्याय १)

अर्थात्– हे ब्राह्मणों! इस प्रकार प्रत्येक द्वापर में वेदों का विभाग होता है और दूसरे पुराण निर्मित होते हैं।

इस प्रमाण से स्पष्ट है कि ये पुराण नितय ग्रन्थ नहीं हैं। यह कालान्तर में नष्ट हो जाते हैं। यहां एक बड़ी पहेली पैदा होती है। इस पृथ्वी की आयु ४ अरब ३२ करोड़ वर्ष की है। इसमें १ हजार चतुर्युगी होती है। प्रत्येक चतुर्यगी में सतयुग–त्रेता–द्वापर व कलियुग यह चार युग होते हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि पृथ्वी की आयु में एक–एक हजार बार चारों युग क्रमशः आते जाते हैं।

हम जिस चतुर्युगी में रह रहे हैं। वह सातवें वैवस्वत मन्वन्तर की २८वीं चतुर्युगी है। इसके पूर्व ६ मन्वन्तर बीत चुके हैं, जिनमें ४५७ बार द्वापर आया और निकल गया तथा २८ बार इस सातवें मन्वन्तर में भी अपने क्रम पर आकर निकल गया।

इस प्रकार जबसे सृष्टि बनी थी, तब से अब तक ४५७ बार सतयुग, ४५७ बार त्रेता, ४५७ बार द्वापर, ४५७ बार कलियुग आये और निकल गये और अब ४५७वीं बार कलियुग चालू है। इसका अर्थ यह होता है कि ४५६ बार सृष्टि काल में पुराण नये बनकर नष्ट हो चुके हैं। यह ४५७ वीं बार के बने हुए पुराण हैं।

पुरणों के अनुसार यदि वेदव्यास जी ने पुराणों को बनाया था तो वह ४५७ वें द्वापर में सत्यवती व पाराशर के संयोग से पैदा हुए थे। इस प्रकार पुराण ब्रह्माजी के द्वारा वेदों से पूर्व एवं सृष्टि के आदि में उत्पन्न सिद्ध नहीं होते हैं।

साथ ही पुराण का यह दावा भी मिथ्या हो जाता है कि सृष्टि के प्रारम्भ में ब्रह्माजी पुराणों को बनाते हैं। एक प्रमाण पुराणों को द्वापर में बना हुआ बताता है। दूसरा प्रमाण सृष्टि के प्रारम्भ में ब्रह्माजी द्वारा निर्मित एवं नित्य मानता है। तीसरा प्रमाण इन पुराणों का कर्त्ता पराशर जी को बताता है। यह सब परस्पर विरूद्ध बातें हैं और तीनों ही मिथ्या हैं।

पुराणों की मान्यता है कि पुराण १८ हैं। इसी प्रकार उप–पुराण भी १८ माने जाते हैं। किन्तु भिन्न–भिन्न पुराणों में इनकी सूची व नामावली में बहुत भेद मिलता है। साथ ही पुराणों की श्लोक संख्या में भी जमीन–आसमान का अन्तर देखा जाता है।

पुराण पहले 26 थे

षड़विंशति पुराणानां मध्येऽप्येकं श्रृणोति यः।
पठेद्वाभक्तियुक्तस्तु स मुक्तो नात्र संशयः।।४१।।

(शिव पुराण उमां संहिता अध्याय १३)

अर्थात्– २६ पुराणों को जो सुनता है और भक्ति पूर्वक पाठ करता है। वह मुक्त होगा, इसमें संशय नहीं।

इससे स्पष्ट है कि शिव पुराण के बनने के समय पुराणों की संख्या २६ रही होगी। किन्तु बाद में यह संख्या १८ निश्चित की गयी है।

पुराणों की भिन्न–भिन्न सूचियां जो उनमें दी हैं, हम उनमें से कुछ यहां प्रस्तुत करते हैं। निसे यह देखा जा सकेगा कि अब भी पुराणों की ठीक–ठीक संख्या व उनकी श्लोक संख्या का पता नहीं लगता है। भागवत, देवी भागवत तथा मत्स्य पुराण में १८ पुराणों के नाम निम्न प्रकार दिये गये हैं,

देखिये–

18 पुराणों की विभिन्न सूचियाँ

१. ब्रह्म, २. पदम्, ३. विष्णु, ४. वायु, ५. भागवत, ६. नारद, ७. मार्कण्डेय, ८. अग्नि, ९. भवष्यि, १०. ब्रह्मवैवर्त, ११. लिंग, १२. स्कन्द, १३. वामन, १४. कूर्म, १५. मत्स्य, १६. गरुड़, १७. ब्रह्माण्ड, १८. वाराह।

ब्रह्मवैवर्त और पद्म पुराणों में सूची निम्न प्रकार दी है–

१. ब्रह्म, २. पद्म, ३, विष्णु, ४, शिव, ५. भागवत, ६. नारद, ७. मार्कण्डेय, ८. अग्नि, ९. भविष्य, १०. ब्रह्मवैवर्त, ११. लिंग, १२. वाराह, १३. वामन, १४. कूर्म, १५. स्कन्द, १६. मत्स्य, १७. गरुड, १८. ब्रह्माण्ड।

भविष्य पुराण में यही सूची निम्न प्रकार दी है–

१. विष्णु, २. स्कन्द, ३. पद्म, ४. भागवत, ५. ब्रह्म, ६. गरुड़, ७. मत्स्य, ८. कूर्म, ९. नृसिंह, १०. वामन, ११. शिव, १२. वायु, १३. मार्कण्डेय, १४. अग्नि, १५.लिंग, १६. ब्रह्माण्ड, १७, वाराह, १८. भविष्य।

उपरोक्त छः पुराणों की पुराणोक्त सूचियां देखने पर ज्ञात होता है कि भागवत, देवी भागवत तथा मत्स्य पुराणों ने जहां वायु पुराण को मुख्य पुराणों में मानकर अपनी सूची १८ पुरणों की पूरी की है, वहां ब्रह्मवैवर्त और पदम् पुराणों में वायु को निकाल दिया गया है और उसके स्थान पर शिवपुराण को अपनी सूची में सम्मिलि किया है।

भविष्य पुराण ने नारद और ब्रह्मवैवर्त को मुख्य पुराण नहीं मानकर इन्हें सूची में से निकाल बाहर किया है तथा इनके स्थान पर नृसिंह, शिव तथा वायु इन पुराणों को अपनी सूची में सम्मिलित करके १८ पुराणों की सूची तैयार की है।

यह सूचियां भागवत् स्कन्द १२ अध्याय ८, देवी भागवत स्कन्द १, अध्याय ३ पदम पुराण उत्तर खण्ड अध्याय २३६, ब्रह्मवैवर्त कृष्ण जन्म खण्ड अध्याय १३१, मत्स्य पुराण, अध्याय ५३, भविष्य पुराण प्रतिसर्ग पर्व खण्ड ३ अध्याय २८ में देखी जा सकती है।

शिक्षक दिवस 5 सितम्बर पर विशेष -

प्रथम भारतीय प्रिंसिपल महात्मा हंसराज

– वेदारी लाल आर्य

महात्मा हंसराज का जन्म १६ अप्रैल सन् १८६४ ई० को पंजाब के होशियारपुर जिलान्तर्गत कस्बा "बजवाड़ा" में लाला चुन्नीलाल के गृह में हुआ था। उनके बड़े भाई लाला मुल्कराज थे। आपकी प्राइमरी की शिक्षा कस्बा बजवाड़ा के ही स्कूल में हुई तत्पश्चात आगे की पढ़ाई के लिए दोनों भाइयों को होशियारपुर के स्कूल में प्रविष्ठ करा दिया गया दोनों भाई चार पाँच किलोमीटर का मार्ग पैदल ही चलकर तपती रेत में नंगे पैर स्कूल तक जाते थे हंसराज पढ़ाई में निपुण थे और अपनी कक्षा में सदा ही प्रथम स्थान पर ही रहते थे। लाला मुल्कराज ने सन् १८७७ में एंट्रेस की परीक्षा प्रथम श्रेणी में उत्तीर्ण कर ली उन्हें आठ रूपया मासिक छात्रवृत्ति मिलने लगी और आगे की पढ़ाई के लिए लाहौर भेज दिया गया उन्होंने हंसराज को भी लाहौर बुलवा लिया लाहौर में हंसराज को क्रिश्चियन स्कूल में प्रवेश दिलाया गया मुल्कराज को डाकखाने में सरकारी नौकरी मिल गई और उन्होंने पढ़ाई छोड़ दी।

सन् १८७७ में जब दोनों भाई लाहौर में थे तो संयोग से उसी वर्ष स्वामी दयानन्द भी पंजाब का प्रवास करते हुए १६ अप्रैल को लाहौर पहुँचे स्वामी जी के आगमन से लाहौर में धूम मच गई और जब उनके व्याख्यान होने लगे तो लोगों को एक नई दिशा का ज्ञान होने लगा उसी समय लाहौर में सर्वप्रथम आर्य समाज की स्थापना हुई थी हंसराज तब तक किशोरावस्था में पहुँच चुके थे और उनकी बुद्धिमता के कारण उनको अन्य साथियों की अपेक्षा स्वामी जी के प्रवचनों का सार भली भाँति समझ में आता था तभी से हंसराज आर्य समाज के विचारों से ओत प्रोत हो गए।

उस समय भारत में कलकत्ता विश्वविद्यालय ही सर्वमान्य विश्वविद्यालय था, सब प्रान्त उसी विशविद्यालय की परीक्षायें दिलाया करते थे हंसराज ने लाहौर के माध्यम से १८८० में कलकत्ता विशविद्यालय की एंट्रेस की परीक्षा उत्तीर्ण की। यदि हंसराज चाहते तो उनको उससमय भी कोई अच्छी नौकरी मिल सकती थी किन्तु उनकी इच्छा पढ़ने की थी अपने पिता तुल्य बड़े भाई लाला मुल्कराज से जब उन्होंने अपनी इच्छा की बात कही तो उन्होंने उन्हें कालेज में प्रविष्ट होने की स्वीकृति प्रदान कर दी उसी वर्ष लाला लाजपतराय, पण्डित गुरूदत्त विद्यार्थी, राजा नरेन्द्रनाथ, रूचिराम साहनी आदि कालान्तर में पंजाब के उल्लेखनीय व्यक्तियों ने भी उसी कालेज में प्रवेश किया इनमें लाला लाजपत राय, पण्डित गुरूदत्त विद्यार्थी राजा नरेन्द्रनाथ से उनकी घनिष्ठता हो गई थी।

३० अक्टूबर सन् १८८३ को महर्षि दयानन्द के निर्वाण प्राप्त किया सात दिन बाद ८ नवम्बर को लाहौर के आर्य पुरूषों की एक सभा हुई पं० गुरूदत्त विद्यार्थी और उनके साथियों ने भावपूर्ण शब्दों में प्रस्ताव किया कि ऋषि की यादगार में एंग्लो वैदिक स्कूल तथा कालेज की स्थापना की जाएसरी उपस्थित जनता ने प्रस्ताव स्वीकार किया।

लाला हंसराज ने तब तक बी०ए० की परीक्षा उत्तीर्ण कर ली थी उनके परिवार वालों को लगा कि अब उनकी आर्थिक दशा सुधर जाएगी क्योंकि उन्हें आशा थी कि बी०ए० कर लेने पर लाला हंसराज को अच्छी नौकरी मिल जाएगी किन्तु उनकी यह आशा फलवती न हो पाई हंसराज स्वभाव से ही स्वतंत्रता प्रेमी व्यक्ति थे। उन्हें किसी का नियंत्रण कभी स्वीकार्य न था। उन्होंने भाँति–भाँति के सरकारी व गैर सरकारी पदों के प्रस्ताव भी प्राप्त हुए उनके मन में किसी देशी रियासत का प्रधानमंत्री बनने की लालसा एक बार अवश्य ही जाग्रत हुई परन्तु जब उन्हें पता लगा कि महर्षि दयानन्द की पावन स्मृति में दयानन्द स्कूल और दयानन्द कालेज स्थापित करने का निश्चय हुआ है और धनाभाव के कारण पूरा नहीं हो पा रहा है तब प्रधानमंत्री की लालसा पर एक महान त्याग का भाव छाने लगा। रह रह कर उनके मन में यही प्रश्न उठता था कि जिस महर्षि ने लोक कल्याण के लिए अपना जीवन बलिदान कर दिया उसके ध्येय को सफल करने के लिए क्या वे कुछ भी नहीं कर सकते।

लाला हंसराज उन दिनों पूर्णतया अपने भाई के वेतन पर निर्भर थे। उनकी कृपा से ही पढ़ पाए थे तदापि जब दयानन्द कालेज की स्थापना का विषय उठा था और उसके लिए धन एकत्रित किया जा रहा था तो उन्होंने भी किसी प्रकार जोड़कर दस रूपये की राशि उसमें दी थी हंसराज के मन में कुछ और ही समा गया था अपने बडत्रे भाई की शरण में जाकर उन्होंने किसी प्रकार की भूमिका की चिन्ता न करते हुए एक प्रकार से यही कहा "मुझे यह जानकर बड़ा दुख हो रहा है कि लाहौरवासियों ने दयानन्द कालेज की स्थापना का निर्णय कर लिया है किन्तु उसके लिए जितना धन चाहिए वह एकत्रित नहीं हो पा रहा है। इस कारण वह कार्य एक प्रकार से शिथिल पड़ गया है मेरी इच्छा हो रही है कि मैं इस कार्य के लिए अपना जीवन समर्पित कर दूँ, अपनी सेवाओं के विनियम में कालेज से मैं एक पैसा भी न लूँ। मैं अपना जीवन इसको दान कर देना चाहता हूँ, किन्तु आपकी अमूल्य सहायता के अभाव में यह कार्य सम्पन्न होना कदापि संभव नहीं हैं।"

लाला मुल्कराज ने बड़े ध्यान से छोटे भाई की बात को सुना उस पर विचार किया और गहन चिन्तन के बाद उकने मुख पर प्रसन्नता की झलक दिखाई दी। लाला मुल्कराज को उन दिनों रू० ८०/– मासिक वेतन मिलता था, जब तक भी वे छोटे भाई की आर्थिक सहायता किया ही करते थे उनको निश्चय करने में कुछ अधिक कठिनाई नहीं हुई। उन्होंने अपना आधा वेतन अपने छोटे भाई के लिए निर्धारित कर दिया और लाला हंसराज ने लाहौर आर्य समाज को पत्र लिखकर सूचित किया "दयानन्द स्कूल खुलने पर मैं उसका अवैतनिक मुख्याध्यापक बनने के लिए उद्यत हूँ।"

०१ जून १८८६ ई० को आर्य समाज लाहौर के भवन में हाईस्कूल आरम्भ कर दिया गया और लाला हंसराज को इसका अवैतनिक मुख्याध्यापक नियुक्त कर दिया गया केवल पाँच दिन में ही इस स्कूल में तीन सौ विद्यार्थियों ने प्रवेश ले लिया ५ जून १८८६ के लाहौर से प्रकाशित होने वाले अंग्रेजी दैनिक पत्र "ट्रिव्यून" ने लिखा– "हमें मुख्याध्यापक महोदय पर पूर्ण विश्वास है जिन्होंने अपने आराम सुख और नाम की तनिक भी अपेक्षा न करते हुए अपना जीवन इस कार्य के लिए अर्पण कर दिया" और इस प्रकार हंसराज प्रथम भारतीय प्रिंसिपल बने। क्योंकि अभी तक क्रिश्चियन स्कूल कालेज हों अथवा भारतीयों द्वारा स्थापित सभी में प्रिंसिपल अंग्रेज ही होते थे।

इस स्कूल की विशेषता यह थी कि इसने शिक्षा विभाग से सम्बद्धता के लिए कभी आवेदन नहीं किया और न ही कभी सहायता अथवा अनुदान के लिए प्रार्थना की। यद्यपि इसको मान्यता हुई व एक अन्य विषय है।

लाला हंसराज द्वारा स्कूल को नियमित रूप से चलाए जाने के विषय से उठी शंकाओं को उन्होंने अपनी कार्यकुशलता से शीघ्र ही निर्मूल साबित कर दिया। उनके अनुशासन और त्याग की छाप उनके विद्यार्थियों पर पड़े बिना न रह सकी थी। कहा जाता है कि जो विद्यार्थी प्रथम वर्ष में इस स्कूल में प्रविष्ट हुए थे उनमें एक शाहबुद्दीन नाम का मुस्लिम छात्र भी था। कालान्तर में वह शाहबुद्दीन सर शाहबुद्दीन कहलाया और बीस वर्ष तक निरन्तर विधान सभा का अध्यक्ष बना रहा था। लाल हंसराज के प्रति उसकी अगाध श्रद्धा थी। लाला जी की मृत्यु पर वह उनकी शोक सभा में भी सम्मिलित हुआ था। उसने अपनी श्रद्धांजलि में कहा था 'जब मेरे पिता की मृत्यु हुई तो मैंने अनुभव किया मैं पिता विहीन हो गया हूँ। जब मेरी माता की मृत्यु हुई तो मैंने समझा कि मैं माता विहीन हो गया हूँ, आज लाला हंसराज की मृत्यु पर मैं अनुभव कर रहा हूँ कि मैं सर्वथा अनाथ हो गया हूँ।'

दयानन्द कालेज कमेटी में एक प्रकार से दो दल हो गए थे। उसी के कारण विवाद बढ़ता जाता था। कमेटी में जिस दल का प्रभुत्व था उसे सुसंस्कृत दल कहा जाने लगा था और आर्य सामज में जिस दल का प्रभुत्व था वह महात्मा पार्टी कहलाने लगा था। महात्मा अर्थात् लाल हंसराज। अब उनको लाला हंसराज के स्थान पर सम्मान से महात्मा जी कहा जाने लगा था, उनकी त्याग तपस्या की यही प्रतिफल था जो समाज ने उनको दिया था।

महात्मा हंसराज डी.ए.वी कालेज के प्रधानाचार्य होते हुए भी किराए के एक छोटे मकान में ही रहते थे जिसका मासिक किराया चार रूपया था। उनका पहनावा भी बड़ा साधारण सा होता था खादी का कुर्ता और खादी का पायजामा। अधिक कपड़े न तो वे पहनते थे और न पास में रखते थे। सर्दियों में कश्मीर पटटू का गर्म कोट पहन लेते थे। गर्मियों में गबरून का कोट पहनते थे। उनके पाँव में होशियारपुर का बना देशी जूता होता था, वे जुर्राबें (मोजे) नहीं पहनते थे विदेशी वस्तुओं को उन्होंने कभी प्रयोग नहीं किया।

उन्होंने २६ वर्ष तक अवैतनिक प्राचार्य के रूप में दयानन्द एंग्लो वैदिक कालेज लाहौर की सेवा की। प्रतिमाह हजारों रूपये वेतन के रूप में बाँटकर जाते और स्वयं खाली हाथ कर जाते थे।

जहाँ तक महात्मा हंसराज जी के महान कार्यों का सम्बन्ध है उन्होंने शिक्षा, वेद प्रचार, हिन्दु जाति की कुरीतियों का सुधार, अकाल बाढ़ और महामारियों जैसी विपत्तियों में हिन्दू जाति की सेवा की और शुद्धि कार्य क्षेत्रों में समर्पित भावना से कार्य करके कीर्तिमान स्थापित किए।

वैदिक मान्यताओं के सम्पोषक : महर्षि दयानन्द सरस्वती

– डॉ० आर्येन्दु द्विवेदी

स्वामी दयानन्द सरस्वती न केवल उन्नीसवीं शताब्दी के समाज सुधारक थे बल्कि वह आधुनिक प्रेरणा के स्रोत भी हैं। उनके धार्मिक एवं सामाजिक चिन्तन से भारतीय समाज को नई रोशनी मिली। महर्षि दयानन्द प्राचीनता और आधुनिकता के मध्य सेतु थे। उन्होंने वैदिक संस्कृति की लुप्त मान्यताओं को पुनर्जागृत किया और सुप्त भारतीय समाज को पुनः स्पन्दित किया। स्वामी दयानन्द ने उन्नीसवीं शताब्दी में वेद एवं भारतीय संस्कृति के आधार पर समाज सुधार का प्रयास किया।

महर्षि दयानन्द वेदों के प्रबल समर्थक थे। उनका मत था कि भारत का विकास तब तक नहीं हो सकता जब तक कि वेदों के साथ–साथ आधुनकि ज्ञान विज्ञान का समन्वय न किया जाए। यही कारण है कि उन्होंने वेद को सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ माना है। उन्होंने आर्यसमाज के जो नियम बनाए हैं उसमें लिखा है कि –'' वेद सब सत्य विद्याओं की पुस्तक है। वेद का पढ़ना, पढ़ाना, सुनना, सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।''

महर्षि ने वेद को ईश्वरीय ज्ञान माना है और कहा है कि वेद सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ हैं उन्होंने वेदों से निकलकर ऐसी बातें प्रकाश में लाईं जिन्हें आधुनिक जगत् में मान्यता प्राप्त है। उन्होंने वेदों को अपौरूपेय माना है और वेदों का ज्ञान सत्य की अनुभूति का एकमात्र आधार घोषित किया हैं स्वामी जी ने वेदों की नवीन तर्क सम्मत व्याख्या प्रस्तुत की है तथा वेदों का हिन्दी अनुवाद भी किया है। स्वामी जी ने कहा है कि प्रत्येक हिन्दू चाहे वह उच्च जाति का हो या निम्न जाति का, स्त्री हो या पुरुष उसे वेदाध्ययन करना चाहिए। उन्होंने वेदमंत्र द्वारा स्पष्ट किया कि परमात्मा द्वारा दिये गए ज्ञान, सूर्य के प्रकाश और जलवायु का अधिकार प्रत्येक व्यक्ति को समान रूप से है। स्वामी जी के अनुसार वेद ही ऐसा ग्रंथ है जिसकी छत्र–शांति प्राप्त कर सकते हैं। स्वामी दयानन्द ने ''स्त्री शूद्रो नाधीयातामिति श्रुतिः'' का खण्डन किया है। स्त्री, शूद्र एवं प्रत्येक स्त्री पुरुष वेदाध्ययन का अधिकारी है। स्वामी दयानन्द ने वेदमंत्र ''इन्दम् मन्त्रम् पत्नी पठेत्'' का उद्घृत करते हुए बताया है कि प्राचीन काल से नारी को वेद पढ़ने का अधिकार प्राप्त था। इसके अतिरिक्त प्राचीनकाल में स्त्रियों और पुरुषों को समान अधिकार प्राप्त था। ऋग्वेद में स्त्री को बालिका, पत्नी तथा माँ बताया गया है। प्रचीनकाल में महिलाएँ शिक्षा सम्पन्न और सुसंस्कारित थीं। गार्गी, मैत्रेयी के रूप में विदुषी महिलाएँ थीं। महिलाएँ वैदिक रीति से विवाह करती थीं।

महर्षि दयानन्द ने वेद को धर्म का मूल माना है और वेदाध्ययन के द्वारा ही धर्म का ज्ञान उत्तम रीति से प्राप्त किया जा सकता है। वेद एवं भारतीय संस्कृति के ग्रंथ के साथ–साथ आधुनिक ज्ञान–विज्ञान के अध्ययन से मानव का संतुलित निर्माण होता है। स्वामी जी ने अपने ग्रंथ सत्यार्थप्रकाश में वेदमंत्रों द्वारा जीवन में सर्वांगीण विकास किस प्रकार किया जा सकता है, वह रास्ता बताया है।

स्वामी विरजानन्द ने गुरुदक्षिणा के समय स्वामी दानन्द से कहा था–''मेरे सामने प्रतिज्ञा करो कि तुम जीवित रहोगे और उन ग्रंथों का खण्डन करोगे जो झूठे मत मतान्तरों और सिद्धांतों की शिक्षा देते हैं। वैदिक धर्म की पुनः प्रतिष्ठा हेतु यदि आवश्यक होगा तो जीवन का उत्सर्ग कर दोगे। यही मेरी गुरुदक्षिणा है।'' गुरु की आज्ञा का पालन करते हुए आपने जीवन भर अनार्ष एवं अन्य ग्रंथों का खण्डन किया। वैदिक धर्म की स्थापना की। वैदिक धर्म के प्रचारार्थ अनेक शास्त्रार्थ किए। उनकी मान्यता है कि विश्व के समस्त धार्मिक ग्रंन्थों में वेद सबसे अधिक प्राचीन है। उनका कुरान, बाईबल तथा पुराणों के प्रति आदर भाव नहीं है। स्वामी जी ने वेदों को ईश्वरीय अभिव्यक्ति के रूप में स्वीकार किया। उनकी मान्यता के आधार पर वेद ईश्वरीय अभिव्यक्ति हैं। जो चार ऋषियों अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा के माध्यम से अभिव्यक्त हुए। स्वामी दयानन्द ने ऋग्वेद आदि मंत्र संहिता को वेद माना है, जबकि अन्य लोग ब्राह्मण ग्रंथों को वेद के रूप में स्वीकार करते हैं। इसके अतिरिक्त मनुस्मृति, बाल्मिकी रामायण, विदुरनीति महाभारत के अंश और ६ दर्शनों को हिन्दू दर्शन का अधिकारी स्वीकार किया है। स्वामी दयानन्द ने सायण, महीधर, मैसमूलर की कौमुदी व्याकरण के आधार पर की गयी व्याख्या को गलत बताया है तथा पाणिनि की अष्टाध्यायी और पंतजलि के महाभाष्य को स्वीकार किया है।

स्वामी दयानन्द ने वेदों को समस्त धार्मिक ग्रंन्थों से प्राचीन स्वीकार किया है। उनके अनुसार वेद संस्कृतभाषा में अभिव्यक्त किए गए हैं जो एक राष्ट्र की भाषा न होकर समस्त भाषाओं की जननी है। जिस प्रकार संस्कृत भाषा सबसे प्राचीन है उसी प्रकार वेद सबसे प्राचीन हैं। उनकी मान्यता थी कि वे उतने ही प्राचीन हैं जितना की मानव। उनके अनुसार वेद ईश्वरीय ज्ञान होने से स्वतः प्रमाणित हैं, क्योंकि वह अपने अधिकार के लिए स्वयं अधिकृत हैं। जबकि अन्य पुस्तकें अपने अधिकार हेतु वेदों पर निर्भर हैं। स्वामी दयानन्द ने कुरान, बाईबल की तुलना में वेदों को अनन्त ज्ञान का भण्डार सिद्ध किया। उनका कहना है कि ईश्वर अनन्त है तो ईश्वरीय ज्ञान भी अनन्त है। स्वामी जी के अनुसार वेदों में केवल दार्शनिक तत्त्व ही नहीं है अपितु वैज्ञानिक आविष्कारों का ज्ञान भी है। उनकी मान्यता है कि सनातन, इस्लाम तथा इसाई धर्म का प्रादुर्भाव महाभारत के बाद हुआ। उन्होंने उस युग की कल्पना भी की है जो भारतीय नरेशों का अफगानिस्तान, बलूचिस्तान व तिब्बत पर अधिकार था और रोम, ग्रीस, पेरू पर उनका शासन था। स्वामी दयानन्द के अनुसार वैदिक युग भारतीय इतिहास का महान् युग था। इस कारण महर्षि दयानन्द ने वैदिक धर्म का समर्थन किया।

महर्षि दयानन्द ने वेदों के समर्थन से भारतवासियों को पौराणिक, अवतारवाद, बहुदेववाद व मूर्तिपूजा के स्थान पर निराकार, एकेश्वरवाद का उपदेश दिया। उनके इस वेद के गौरव ज्ञान से भारतीयों में अपने धर्म के प्रति पुनः अनुराग उत्पन्न हुआ। स्वामी दयानन्द ने वेदमंत्रों के आधार पर गौ सहित सभी पशुओं की रक्षा का प्रावधान किया है। उन्होंने अहिंसा का समर्थन किया है। उन्होंने यजुर्वेद के मंत्र '**अन्या यजमानस्य पशून्पति**' की आज्ञा का उपदेश दिया है।

हमारे प्राचीन ग्रंथ वेदों में विज्ञान का विशद वर्णन है। स्वामी दयानन्द के अनुसार गुरुत्वाकर्षण का नियम, खगोलशास्त्र का ज्ञान, बीजगणित और रेखागणित का ज्ञान भी वेदों में निहित है। स्वामी दयानन्द ने सत्यार्थ प्रकाश में यजुर्वेद ३–६ का उद्धरण देते हुए कहा है कि–'' सभी नक्षत्र, सूर्य, चन्द्रमा, पृथ्वी, आकाश में अपनी धुरी पर घूमते हैं। वेदभाष्य की भूमिका में स्वामी दयानन्द ने स्टीमरों, हवाई जहाजों तथा भाप से चलने वाली कारों का वर्णन किया है। उनके अनुसार वेदों में जल, थल तथा आकाश की सुविधाओं का प्रयोग करना आदि बातें निहित हैं।

स्वामी दयानन्द केवल धर्म से संतुष्ट नहीं थे बल्कि वह यूरोपीय वैज्ञानिक आविष्कारों के महत्त को भी महसूस करते थे। इसलिए वह पूर्व पश्चिम की प्राचीन व नई बातों का समन्वय पैदा करना चाहते थे तथा वेदों द्वारा भारतीयों की बौद्धिक व आध्यात्मिक सर्वोच्चता की गारंटी देना चाहते थे। उन्होंने भारतीयों के पतन का कारण वेदाध्ययन का अभाव ही स्वीकार किया है तथा भारतवासियों को रूढ़िमुक्त होने के लिए 'वेदों की ओर चलो' का नारा दिया। स्वामी दयानंद ने वेदों को समस्त धार्मिक ग्रंथों से प्राचीन स्वीकार किया तथा उन्हें समस्त ज्ञान का भण्डार सिद्ध किया। उन्होंने ऋग्वेदभाष्य, यजुर्वेदभाष्य, ऋग्वेदभाष्य भूमिका आदि ग्रंथ लिखकर समाज को नई दिशा प्रस्तुत की।

उन्होंने वैज्ञानिक आविष्कारों के ज्ञान को भी वेदों में निहित बताकर भारतीयों को धार्मिक ज्ञान के साथ–साथ वैज्ञानिक ज्ञान भी प्रदान किया। महर्षि दयानन्द की वेदवादी धारणा ने भारतवासियों में धार्मिक अंधविश्वास से मुक्त करने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया तथा दूसरे देशवासियों को वेदों की महानता का ज्ञान हुआ जिससे उनमें स्वधर्म के प्रति स्वाभिमान भाव उत्पन्न हुए।

महर्षि अरविंद ने स्वामी दयानन्द के इस वेदवाद की प्रशंसा करते हुए लिखा है कि–''स्वामी दयानन्द ने ठीक ही वेदों को भारत के युगों की चट्टान समझ कर पकड़ लिया और उसमें उन्होंने तारूण्य की समग्र शिक्षा, एक समग्र पुरुषत्व तथा एक समग्र राष्ट्रीयता को जो दर्शन किया उस पर निर्णय करने का साहस दिखलाया व निश्चय ही उसमें राष्ट्रीय भक्ति विद्यमान थी।''

विभागाध्यक्ष सामजशास्त्र
राजकीय महाविद्यालय कैम्पियरगंज, (गोरखपुर)

पितृ यज्ञ सर्वोपरि है

– वेदारी लाल आर्य

प्रथा बहुत प्राचीन है जिसके अंतर्गत आश्विन मास की प्रतिपदा से अमावस्या तक १५ दिन पितृपक्ष के रूप में मनाए जाते है। एक किवदंती है कि जब औरंगजेब ने अपने भाईयों को मारकर अपने पिता शाहजहाँ को आगरा के किले में कैद में डाल दिया था, तो वह अपने पिता को मात्र एक घड़ा पानी रोज देता था जिससे दिनभर प्यास बुझाई जाए तथा स्नान किया जाए। और पाँच वक्त की नमाज़ के समय वजू भी किया जाए। शाहजहाँ ने औरंगजेब को एक दिन ताना दिया था कि तुमसे तो वे हिन्दू अच्छे हैं जो पितृपक्ष में अपने माता–पिता को मृत होने पर भी पानी देते हैं। इससे माना जा सकता है कि पृथा प्राचीन है।

महर्षि दयानन्द ने अपने अमर ग्रंथ सत्यार्थ प्रकाश और पंचमहायज्ञ विधि में लिखा है कि प्रत्येक व्यक्ति को प्रतिदिन पांच प्रकार के यज्ञ अवश्य ही करने चाहिए। प्रातःकाल सूर्योदय से पूर्व और सांय काल सूर्यास्त के पश्चात संधिवेला में नित्यब्रह्म यज्ञ (संध्या) करनी चाहिए जिसके द्वारा परमात्मा के गुणों का स्मरण कर सत्य मार्ग पर चलने हेतु प्रार्थना की जानी चाहिए। दूसरा यज्ञ प्रातः संध्या के पश्चात और सायं काल में संध्या के पूर्व देव यज्ञ करना चाहिए जिसमें हवन कुण्ड में घी व हवन सामग्री जिसमें रोग नाशक सुगंधि कारक और पुष्टि कारक द्रव्यों का उपयोग कर आहुतियां लकड़ी की समिधाओं में देकर वायु मण्डल की शुद्धि करने का विधान है।

तीसरा यज्ञ पितृ यज्ञ है। पितृ यज्ञ का तात्पर्य है कि जीवित माता–पिता तथा घर परिवार के अन्य वयोवृद्ध स्त्री पुरूषों को उनकी इच्छानुसार अच्छा भोजन, वस्त्र तथा अन्य वयोवृद्ध स्त्री पुरूषों को उनकी इच्छानुसार अच्छा भोजन, वस्त्र तथ अन्य जीवन यापन की वस्तुएं देकर संतुष्ट करना ताकि वे हमें अपना शुभाशीष प्रदान कर सकें। चौथा यज्ञ अतिथि यज्ञ है जिसमें घर पर आने वाले विद्वान परोपकारी व्यक्तियों को भोजन, वस्त्र देकर उनका सत्कार करना। पांचवा यज्ञ है बलि वैश्यदेव यज्ञ। इसके अतंर्गत कीट, पतंग, कीटों आदि पक्षी तथा पशुओं को यथाशक्ति भोजन पानी देना। परंतु वर्तमान में पितृपक्ष के १५ दिन जिस दिन किसी परिवार के किसी व्यक्ति की मृत्यु हुई हो कई वर्ष पूर्व। उसकी स्मृति में जन्मजात ब्राह्मणी को भोजन कराना पुण्य ही नहीं समझा जाता अपितु यह भी मान्यता है कि इस प्रकार कराने से उनके पितृ तृप्त होते हैं और वे वर्ष भर भरे पेट रहते हैं।

आज हम विज्ञान की २१वीं सदी में रह रहे है। अतः उक्त मान्यता वैज्ञानिक रूप से कितनी मानने योग्य है, सुधी पाठक स्वयं ही समझ समझ सकते हैं आज कल मशीनी युग में रहने वाले हम सभी जानते हैं कि माता पिता के लिए सन्तानों के पास कितना समय होता है? तो पितृरों की सेवा करने का प्रश्न ही नहीं उठता है भरेपूरे परिवारीजन जो पति पत्नी दोनों नौकरी या व्यापार में व्यस्त हैं उनमें से अधिकांश माता–पिता को वृद्धाश्रमों में भेजकर अपने कर्तव्यों की अतिश्री मान लेते है। कुछ माता पिता तो अपने सन्तानों के दुर्व्यवहार के कारण स्वयं वृद्धाश्रमों का रास्ता ले लेते हैं। जिन्हें अपनी पेंशन मिलती है या कुछ बचाकर रखा है वे तो सुखी रहते है। परंतु जो धनाभाव के कारण विवश होते हैं वे वृद्धावन आदि ऐसे स्थानों का रास्ता लेते हैं जहाँ कुछ एन०जी०ओ० ने धर्माथ इस प्रकार निःशुल्क वृद्धाश्रमों की व्यवस्था कर रखी है आजकल मृतक आश्रितों को नौकरी आसानी से मिल जांती है ऐसे में कुछ लालची पुत्र ही नहीं, पुत्रियाँ भी अपनी माता पिताओं की हत्या तक कर देते हैं।

महर्षि दयानन्द अपने जीवन काल में सदैव ही पितृपक्ष ब्रह्मभोज कराने के खिलाफ जनमानस को सचेत करते रहे। आर्य समाज ने भी इस प्रकार पितृपक्ष में ब्रह्मणों को भोजन कराने का विरोध किया। यह कृत्य वेद विरूद्ध है सोचने वाली बात यह है कि यदि किसी व्यक्ति को मृत व्यक्ति के लिए भोजन कराने से मृत व्यक्ति तृप्त हो सकता है और वह भी पूरे एक वर्ष के लिए तो यदि हमारा कोई अपना सम्बन्धी देश विदेश में कहीं बाहर रहता है तो उसके नाम पर भी किसी ब्रह्मण को भोजन करा दिया जाए तो वह जहाँ है वहाँ तृप्त हो जावेगा? कदापि नहीं। अतः जीवित माता–पिता और परिवार के वृद्धजनों की सेवा ही सच्चा पितृ यज्ञ है। ब्रज भाषा में एक लोक भजन है जिसकी कुछ पंक्तियाँ निम्नवत हैं जो विचारणीय है– जीयत पिता से दंगमदंगा, मरे पिता पहुंचाए गंगा। तनिक भात पत्तल पर रख कर कौआ बाप बनाए, सुनो संता लोगों प्रभु बिना कौर तारे।।

प्रेरक प्रसंग –

आत्म विश्वास

पूर्वकाल में जापान के राज की एक पड़ौसी राजा से लड़ाई छिड गई। जापानी पक्ष कमजोर देखकर व सेवा भावों की कमी देखकर राजा का सेनानायक राजा के पास आकर अपनी कमजोरी का हाल बताकर कहने लगा– महाराज! बिना युद्ध लड़े ही पड़ोसी राजा से सन्धि कर ली जाय क्योंकि मुझे आशा नहीं है कि हम जीत सकेंगे। सेनानायक की बातें सुनकर राजा घबरा गया और कुछ विचारपूर्वक बोला– हे सेनापति! अभी तुम कुछ ठहरो। पास ही एक भविष्य चिन्तक महात्मा रहते हैं मैं उनसे जाकर पूछ लेता हूँ। सम्भव है वे कुछ राय दें। राजा सन्त के पास गये और करबद्ध होकर सब वृत्तान्त कह सुनाया। सन्त ने सुनकर कुछ गम्भीर मुद्रा में कहा– हे राजन्! सबसे पहले आप उस कायर, राष्ट्रद्रोही और नालायक सेनानायक को बन्दी बनकार कारागार में बन्द कर दो।

राजा ने सन्त से कहा– महाराज! सेनानायक को बन्द करके पुनः मैं क्या करूँगा? क्योंकि मेरे पास कोई और योग्य व्यक्ति नहीं है।

सन्त ने कहा– आप चिन्ता न करें मैं सेनापति का काम करूँगा। यह तय होकर सन्त सेनापति का भार लेकर अपनी सेना के साथ लड़ाई के लिए चल दिये। मार्ग में चलते हुए सनत सेनापति ने एक स्थान पर सेना को रूकने का आदेश दिया और सेना रुक गई। सैनिकों ने पूछा–महाराज! रुके क्यों? क्या है?

सन्त सेनापति बोले–वह देखा एक मन्दिर है। वहाँ जाकर भगवान से पूछ लेते हैं कि हम जीतेंगें या हारेंगे? सैनिकों ने कहा–आप वहाँ जाकर गुप्त वार्तालाप करेंगे। हमें यथार्थता का ज्ञान कैसे हो?

सेनानायक सन्त बोले ठहरों, सबके सामने हम यह तय कर लेंगे कि भगवान क्या कहते हैं? इतना कहकर सन्त ने अपनी जेब से एक सिक्का निकाला और कहा–देखो ऊपर फेंकता हूँ, यदि यह चित्त गिरेगा तो जीत हमारी निश्चित होगी और चित्त नहीं गिरता तो जीत नहीं होगी। पुनः वापिस लौट चलेंगे।

सेनापति सन्त ने सिक्का उछाला और सिक्का चित्त ही गिरा। सारे सैनिक खुशी के मार उछल पड़े कि भगवान को हमारी जीत मन्जूर है। ऐसा जानकर सारी सेना आगे बढ़कर शत्रुसेना पर भूखे शेरों की भाँति टूट पड़ी और अनेकों बलिदान देकर जापानी सेना जीत गइ।

लौटते समय सैनिकों ने अपने सेनापति सन्त से कहा– " महाराज! चलो मन्दिर में भगवान को धन्यवाद दे आये।"

सेनापति सन्त ने कहा ऐ बहादुरों! देखों, यह तुम्हारे अटूट विश्वास, पौरुष और देश भक्ति का चमत्कार था, भगवान का नहीं। ईश्वर पुरुषार्थ व शक्ति शौर्य के साथ रहता है। देखों यह सिक्का (जेब से निकालते हुए) तो दोनों तरफ से चित्त ही है।

सैनिकों को सिक्का देखकर अपने पर विश्वास हो गया। सार–मनुष्य स्वयं अपने भाग्य का निर्माता है और उसके विचार तथा क्रियाऐं एक प्रकार से उपक्रम हैं जिनसे यह कार्य करता है।

प्रेरक प्रसंग –

महाराजा रणजीत सिंह की दया

महाराजा रणजीत सिंह एक बार जंगल में कुछ सिपाहियों के साथ विशेष परामर्श कर रहे थे तभी अनायास ही कहीं से एक पत्थर उनके माथे पर आ लगा और खून बहने लगा। सिपाही चौंके और इधर–उधर भाग कर पत्थर मारने वाले को खोजने लगे। सिपाहियों को एक बेर के पेड़ के पास पत्थर फेंकती हुई एक बूढ़ी स्त्री मिल गई। वे उसे पकड़ कर महाराजा के पास ले आये और बोले –" महाराज! यही अपराधिन है, इसी ने आप पर पत्थर मारा है।"

रणजीत सिंह जी ने बूढ़ी से पूछा– " क्यों, माता तुमने पत्थर मारा है?"

थर–थर काँपती हुई बूढ़ी बोली– " अन्न दाता मेरा बेटा की से भूखा है। घर पर खाने को कुछ भी नहीं है। इसलिए मैं पत्थर मार–मार करके बेर तोड़ रही थी, ताकि बेटे की भूख मिटा सकूँ। दुर्भाग्य मेरा कि एक पत्थर आपके आ लगा। मुझे इसका भारी दुःख है। अब आप जो सजा उचित समझें मुझे दें।"

महराज बुढ़िया की सफाई सुनकर चिन्ता में पड़ गये, थोड़ी देर सोचते रहे, फिर अपने एक कर्मचारी से बोले– इसे एक हजार रूपये दे दो।' यह सुनकर कर्मचारीगण आश्चर्य में पड़ गये। एक ने राजा से पूछ ही लिया– "दया निधान! इसे दण्ड मिलना चाहिये या इनाम?"

महाराजा मुस्करा पड़े और बोलें –" पंजाब का महराज क्या अपने को बेर के पेड़ से भी ओछा सिद्ध करे?" कुछ पाकर नम्र भाव से बूढ़ी विदा हुई।

सार–

वृक्ष कबहुं न फल भखे, नदी न सिचै नीर।
परमार्थ के कारणै, साधुन धरा शरीर।।

स्वास्थ्य चर्चा :- बवासीर बादी

१. रीठे के छिकले तथा श्वेत कत्था– दोनों को समभाग लें। रीठे के छिलकों को तवे पर इतना भूनें कि उनका तेल न जलने पाए। जब आपस में चिकने लगें और भुन जाएँ तब उतारकर रीठे और कत्था दोनों को खरल करके चूर्ण बना लें। ४ ग्रेन से ८ ग्रेन तक इस चूर्ण को मक्खन के साथ खाने से बादी बवासीर अवश्य नष्ट होती है। अचूक औषधि है।

इसके सेवन से कब्ज, बवासीर की खाज ओर मस्सों को बिल्कुल आराम आ जाता है। रक्त बन्द हो जाता है। यदि छह मास के पश्चात् एक बार पुनः ७ दिन के लिए प्रयोग कर लिया जाए तो आयु–भर रोग उभरे का डर नहीं रहता।

परहेज– तीन दिन तक नमक न खाएँ। सात दिन तक खटाई से परहेज रक्खें।

छिलका–रहित ५० ग्राम इमली के बीज तवे पर भून लें, फिर कूट–पीसकर चूर्ण बना लें। प्रातः ६ ग्राम चूर्ण को ५० ग्राम दही में मिलाकर खाएँ।

बरना के पत्ते ७, कालीमिर्च ७ नग। दोनों को सिल बट्टे से घोट–पीसकर ठण्डाई बनाकर पीएँ। खूनी बादी सब प्रकार की बवासीर ७ दिन में जडमूल से नष्ट हो जाएगी।

नोट– आवश्यकता समझें तो मीठा करने के लिए थोड़ी चीनी मिला सकते हैं।

हरसिंगार के बीच छिले हुए १० ग्राम, कालीमिर्च ३ ग्राम दोनों को पीसकर गुदा पर लेप करने से बवासीर नष्ट होती है।

बवासीर–सर्वप्रकार

१. मूली का रस १२५ ग्राम, जलेबी शुद्ध घी में बनी १०० ग्राम।

मूली के रस में जलेबी को एक घण्टे भीगनें दें, तत्पश्चात् जलेबी खाकर पानी को पी जाएँ। एक सप्ताह सेवन करने से बवासीर जीवन भर के लिए विदा हो जाती है।

२. चार प्यालों में धाराघ्ण गोदुग्ध लें। इन प्यालों में क्रमशः आधा–आधा नींबू का रस निचोड़कर पीते जाएँ। ५–६ दिन के प्रयोग से ही लाभ प्रतीत होने लगता है।

३. नागकेसर और सफेद सुर्मा, दोनों समभाग लें और कूट–पीसकर कपड़छन कर लें। प्रतिदिन प्रातः, सायं आधा–आधा ग्राम दवा ६ ग्राम शहद में मिलाकर चाटें। सभी प्रकार की बवासीरों में आश्चर्यजनक लाभदायक है।

४. कच्चे अनार का छिलका (नासपाल) बारीक कूटकर कपड़छान कर लें। ३ ग्राम चूर्ण १०० ग्राम दही में मिलाकर प्रातः–सायं दोनों समय खाली पेट सेवन करें।

५. आवश्यकतानुसार कचूर लेकर बारीक पीस लें। प्रातः सायं ५ ग्राम चूर्ण पानी के साथ फांक लिया करें। दो सप्ताह तक सेवन करने से सर्वप्रकार की बवासीर ठीक हो जाती है।

६. इन्द्रायण फल ८ किलो काटकर कड़ाही में डाल दें। उस पर रोगी को खड़ा कर दें और उससे कहें कि जब उसका मुंह कड़वा न हो जाए तब तक उन्हें पैरों से मलता रहे। मुंह में कड़वास पहुंचने पर रोगी को लिटा दें। थोड़ी देर पश्चात् अत्यन्त दुर्गन्धयुक्त दस्त होगा तथा रोगी सदैव के लिए अर्श रोग से छुटकारा पा जाएगा।

७. अपामार्ग (चिरचिटा) के पत्ते ६ ग्राम, कालीमिर्च ५ नग, दोनों को ठण्डाई की भांति घोटकर पिलाने से बवासीर दूर होती हैं। दवा खाने के बाद रोटी और घी का प्रयोग करें।

८. काली जीरी ५० ग्राम लें। आधी को भून लें और आधी को कच्ची ही रहने दें। फिर दोनों को कूट–पीसकर कपड़छन कर लें। ३–३ दवा प्रातः सायं पानी के साथ फंकाएँ। सर्व प्रकार के बवासीर दूर होती है।

९. ६ ग्राम इन्द्राजौ का चूर्ण ३ ग्राम को ६ ग्राम शहद के साथ चाटने से खूनी और बादी बवासीर दूर होती है।

१०. इन्द्रजौ का चूर्ण ३ ग्राम को ६ ग्राम शहद के साथ चाटने से खूनी बवासीर जड़ से नष्ट हो जाती है।

बवासीर के मस्से

१. अजवायन देसी, अजवायन जंगली, अजवायन खुरा–सानी, तीनों को समभाग लेकर सूक्ष्म पीसकर मक्खन में मिलाकर मस्सों पर लगाने से कुछ ही दिन में मस्से मुरझाकर स्वयं गिर जाते हैं।

२. नीम और पीपल के पत्ते घोट–पीसकर लेप करने से अर्श के मस्से नष्ट होते हैं।

३. हुलहुल के पत्ते ३० ग्राम पीसकर टिकिया बना लें। इस टिकिया को बवासीर के मस्सों पर रखकर ऊपर से लंगोट चढ़ा लें। ३ दिन ऐसा करने से मस्से दूर हो जाएँगे।

४. कुचला के बीज को मिट्टी के तेल में घिसकर मस्सों पर लेप करने से मस्से सूख जाएँगे।

५. हाथी –दाँत का चूरा अग्नि पर डालकर गुदा के मस्सों पर धूनी देने से मस्से सूख जाते हैं।

६. फिटकरी भुनी हुई पानी में घोलकर मस्सों पर लगाएँ।

७. आम के पत्तों का रस लगाना भी लाभदायक है।

८. दारचिकना २ ग्राम, नीलाथोथा १ ग्राम–दोनों को बारीक पीसकर सुरक्षित रख लें। प्रातः शौच आदि से निवृत्त होकर २ ग्रेन दवा लगाएँ, फिर न लगाएँ। १० दिन में मस्से सूखकर गिर जाएँगें। पथ्य में तेल के पूड़े और गुलगुले खाने को दें। नोट : दवा लगाकर उसी समय गुदा को न धोएँ, अन्यथा गुदा सूज जाएगी।

९. चीनिया कपूर १० ग्राम, सरसों कापकाया हुआ तेल ५० ग्राम। दोनों को मिलाकर एक शीशी में भर दें और तीन दिन तक रक्खा रहने दें। इस तेल को फुरेरी से मस्सों पर लगाएँ। १५ दिन तक प्रयोग करें। कैसे भी मस्से क्यों न हों नष्ट हो जाएंगें।

कन्याएँ कितनी महिमामयी?

– प्रियवीर हेमाइना

कन्याएं कितनी महिमामयी जो संवारती दो कुलों को।
कन्याएं कितना प्यारा धन, जो न रुचता बस दुर्कुलों को।।
दुर्कुल करते इनकी हत्या, लोक में आने से ही पूर्व।
वे न समझते इनकी महिमा, प्रभु ने जो दी इन्हें अपूर्व।।
दिया प्रभु ने कन्याओं को, ''मातृशक्ति'' का इक वरदान।
भर दिया हृदय में इनके ही, दया ममता का अनुपम दान।।
विनम्रता औ कोमलता में, क्या कोई है इनके समान?
बसते हैं बस वहीं देवता, जहाँ होता इनका सम्मान।।
जहाँ न मिलता इनको सम्मान, क्रियाएँ सभी होती निष्फल।
कोई भी देश न देख सके, कन्याओं बिना स्व–सुन्दर कल।।
हा! पुत्रियों के जन्म से ही, हम क्यों है डूबते शोक में?
पर होवे न इनका जन्म तो, होवे पुत्र क... ...में?
यदि देवी देवकी न होती, कृष्ण–सी आत्मा कहाँ पाते?
उस योगिराज की गीता का, वह ज्ञान कहाँ से हम पाते?
यदि जीजाबाई ना होती, क्या वीर शिवाजी हम पाते?
यदि लक्ष्मीबाई ना होती, 'मर्दानी' शब्द कहाँ पाते?
आदर्श माता ने ही एक, था दिया हमें वह दयानन्द।
जिसने वैदिक शिक्षाओं से, दिया जन–जन को सौख्यानन्द।।
वह विद्यावती न होती यदि, मिल जाता क्या वह हमें सिंह?
इतिहास में स्वाधीनता के, है सुनाम जिसका–भगत सिंह।।
नहीं लोक में होती माता, वही रामदुलारी यदि यहाँ।
वह लालबहादुर शास्त्री–सा, वह लाल महान् मिलता कहाँ?
बदलो अपनी निकृष्ट सोच, मानो अमूल्यतम कन्या को।
कन्या भ्रूण हत्या का पाप, पाओ न नष्ट कर कन्या को।।
कन्या भ्रूण हत्या करके, क्यों पाप के भागी बनते हो?
ईश्वर की न्याय–व्यवस्था में, क्यों दण्ड के भागी बनते हो?

मो० ७५०३०७०६७४

विद्वान् लेखकों से निवेदन

आपके स्नेहिल आशीर्वाद से आर्य मित्र को सुन्दर बनाने का प्रयास रहता है यदि आपका चिन्तन लेख अथवा कविता के रूप में वैदिक संस्कार, विचार, प्रकाशनार्थ प्राप्त हो जायें तो हमारा सौभाग्य होगा। सुविधानुसार डाक/ई-मेल पर भी भेज सकते हैं। प्रतीक्षा रहेगी।

आपका अपना ही सदैव–

धर्मेश्वरानन्द सरस्वती

सम्पादक/मंत्री

आर्य प्रतिनिधि सभा, उ0प्र0, लखनऊ

सम्पर्क सूत्र– 9837402192, 0522–2286328

आर्य मित्र
नारायण स्वामी भवन, ५-मीराबाई मार्ग, लखनऊ दूर/फैक्सः ०५२२-२२८६३२८
का० प्रधान- ०६४१२७४४३४१, मंत्री- ०६८३७४०२१६२, व्यवस्थापक- ६३२०६२२२०५
ई-मेल : apsabhaup86@gmail.com

सेवा में,
....
....

वैदिक मार्गदर्शन ही बचाएगा जल प्रलय से

– विनीत नारायण

सर्यू नारायण अपने पूरे तेवर दिखा रहे हैं। यह तो आगाज है। १० साल पहले ही जलवायु परिवर्तन के विशेषज्ञों द्वारा चेतावनी दे दी गई थी कि २०३५ तक पूरी धरती जलमग्न हो जाएगी। यह चेतावनी देने वाले २ वैज्ञानिकों, राजेन्द्र पचैरी व भूतपूर्व अमरीकन उप राष्ट्रपति अलगोर को ग्लोबल पुरस्कार से नवाजा गया था। विश्व के ३००० भूगर्भ शास्त्रियों ने एक स्वर में यह कहा कि अगर जीवाश्म ईंधन यानी कोयला, डीजल, पैट्रौल का उपभोग कम नहीं किया गया, तो वायुमंण्डल में कार्बन डाईआक्साइड व ग्रीन हाऊस गैस की इतनी मोटी धुंध हो जाएगी कि सूर्य की किरणें उसमें प्रेश करके धरती की सतह पर जमा हो जाएंगी और बाहर नहीं निकल पाएंगी जिससे [illegible] २ डिग्री से बढ़कर १५–१७ डिग्री [illegible] जा पहुंचेगा जिसके फलस्वरूप उत्तरी, दक्षिणी ध्रव और हिमालयन ग्लेशियर की बर्फ पिघलकर समुद्र में जाकर जल स्तर बढा देगी जिससे विश्व के सारे द्वीप इंडोनेशिया, जापान, फिलीपींस, फिजी आईलैंड, कैरीबियन आईलैंड आदि जलमग्न हो जाएंगे और समुद्र का पानी ठाठें मारता समुद्र के किनारे बसे हुए शहरों को जलमग्न करके, धरती के भू–भाग तक विनाशलीला करता हुआ आ पहुंचेगा। उदारण के तौर पर भारतीय संदर्भ में देखा जाए तोबंगाल की खाड़ी का पानी विशाखपळनम, चेन्नई, कोलकाता जैसे शहरों को डुबोता हुआ दिल्ली तक आ पहुंचेगा।

इससे घबराकर पूरे विश्व ने 'सस्टेनेबल ग्रोथ' नारा देना शुरू किया। मतलब कि हमें ऐसा विकास नहीं चाहिए, जिससे कि लेने के देने पड़ जाएं पर अब हालात ऐसे हो गये हैं कि चूहों की मीटिंग में बिल्ली के गले में घंटी बांधने की युक्ति तो सब चूहों ने सूझा दी लेकिन बिल्ली के गले में घंटी बांधने के लिए कोई चूहा साहस करके आगे नहीं बढ़ा। अमरीका जैसा विकसित देश कोयले, पैट्रौल और डीजल का उपभोग कम करने के लिए तैयार नहीं हो सका। उसने सरेआम क्योटो प्रोटोकोल की धज्जियां उड़ा दीं। दुनिया की हालत यह हो गई कि कि एक तरफ कुआं, दूसरी तरफ खाई, दोनों ओर मुसीबत आई। ऐसे मुसीबत के वक्त भारतीय वैदिक वैज्ञानिक सूर्य प्रकाश कपूर ने भूगर्भ वैज्ञानिकों से प्रश्न पूछा कि धरती का तापमान १५ डिग्री सैं. किस स्रोत से है? तो वैज्ञानिकों ने जवाब दिया कि १५ डिगी सै. तापमान का अकेला स्रोत सूर्य की धूप है। तो अथर्ववेद के ब्रह्मचारी सूक्त के मंत्र संख्या १० और ११ में ब्रह्मा जी ने स्पष्ट लिखा है कि धरती के तापमान के दो स्रोत हैं। एक 'जियोथर्मल एनर्जी' भूतापीय ऊर्जा और दूसरा सूर्य की धूप। याद रहे कि विश्व में ५५० सक्रिय ज्वालामुखियों के मुंह से निकलने वाला १२०० डिग्री सै. तापमान का लावा और धरती पर फैले हुए १ लाख से ज्यादा गर्म पानी के चश्मों के मुहँ से निकलता हुआ गर्म पानी, भाप और पूरी सूखी धरती से निकलने वाली 'ग्लोबल हीट फ्ले', ही धरती के १५ डिग्री सैं. तापमान में अपना महत्वपूर्ण योगदान देती हैं। कुल मिलाकर सूर्य की धूप के योगदान से थोड़ा सा ज्यादा योगदान इस भतापीय ऊर्जा का भी है। यूँ माना जाए कि ८ डिग्री तापमान भूतापीय ऊर्जा और ७ डिग्री सै. तापमान का योगदान सूर्य की धूप का है। उदाहरण के तौर पर दिल्ली के किसी मैदान में वर्ग मी. जगह के अंदर से ८५ मिलीवॉट ग्लोबल हीट फ्लो निकलकर आकाश में जाती है जो कि धरती के वायुमंडल को गर्म करने में सहयोग देती है। इस तरह विश्व की एक महत्वपूर्ण बुनियादी मान्यता को वेद के मार्गदर्शन से गलत सिद्ध किया जा सका।

इसका एक समाधान है कि सभी सक्रिय ज्वालामुखियों के मुख के ऊपर जियोथर्मल पॉवर प्लांट लगाकर १२०० डिग्री तापमान की गर्मी को बिजली में पिरवर्तित कर दिया जाए और उसका योगदान वायुमंडल को गर्म करने से रोकने में किया जाए। इसी प्रकार गर्म पानी के चश्मों के मुंह पर भी जियोथर्मल पॉवर प्लांट लगाकर भूतापीय ऊर्जा को बिजली में परिवर्तित कर दिया जाए। इसके अलावा सभी समुद्री तटों पर और द्वीपों पर पवन चक्कियां लगाकर वायुमंडल की गर्मी को बिजली में परिवर्तित कर दिया जाए तो इससे ग्लोबल कूलिंग हो जाएगी और धरती जल प्रलय से बच जाएगी। भारत के हुक्मरानों के लिए यह प्रश्न विचारणीय होना चाहिए कि जब हमारे वेदों में प्रकृति के गहनतम रहस्यों के समाधान निहित हैं तो हम टैक्नोलॉजी के चक्कर में सारी दुनिया में कटोरा लेकर क्यों घूमते रहते हैं? पर्यावरण हो, कृषि हो, जल संसाधन हो, स्वास्थ्य हो, शिक्ष हो या रोजगार का सवाल हो, जब तक हम अपने गरिमामय अतीत को महत्व नहीं देंगे, तब तक किसी भी समस्या का हल निकलने वाला नहीं है।

अनिवार्य शुभ सूचना

प्रदेश एवं देश की समस्त आर्य समाजों एवं जिला सभाओं तथा प्रतिनिधि सभाओं के आर्य श्रेष्ठी, आर्य कार्यकर्त्ताओं को जानकर प्रसन्नता होगी कि आर्य प्रतिनिधि सभा उ०प्र० ने निर्णय लिया है कि जो आर्य सन्यासी तथा विद्वान् उपदेशक वृद्ध होने पर रुग्ण होने पर असहाय स्थिति में रहते हैं उसके लिए ''आर्यविद्वत्सहायता निधि'' की स्थापना की गई है जो न्यूनतम २ करोड़ रुपये की होगी इसके ब्याज से प्रतिमास पेंशन रूप में सहायता दी जायेगी उसका पृथक् से खाता भी खोल दिया गया है। आप सभी से सनुरोध प्रार्थना है कि प्रत्येक आर्यसमाज/जिला सभा, प्रतिनिधि सभायें अपने स्तर से अथवा व्यक्तिगत रूप से निधि की राशि पूर्ति हेतु अभियान चलाकर पुण्य के भागी बनेगें ऐसा मुझे पूर्ण विश्वास है। आप द्वारा दिया गया सहयोग, वेदप्रचार एवं विद्वत्सम्मान में नींव का पत्थर बनेगा। पुण्य के भागी बनकर हमारा मनोबल बढ़ायेगें तथा अन्यों को भी प्रेरणा प्रदान करेंगे।

डॉ० धीरज सिंह आर्य
सभा प्रधान

अरविन्द आर्य
सभा कोषाध्यक्ष

धर्मेश्वरानन्द सरस्वती
सभा मन्त्री, मो० : ९८३७४०२१६२

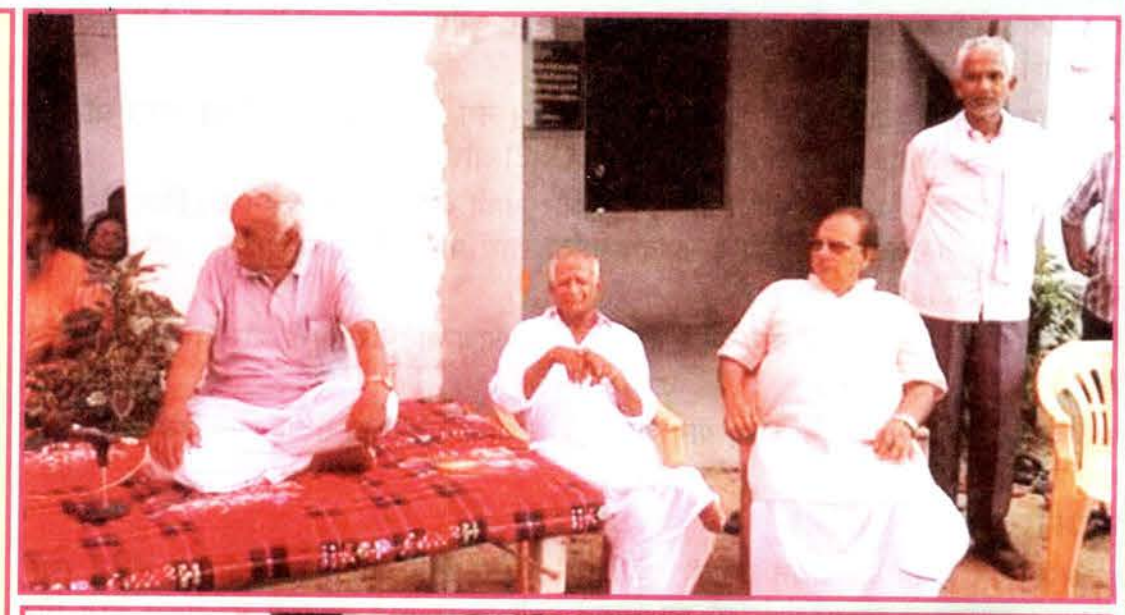

आर्य समाज अरनिया खुर्द (बुलन्द शहर) में वेद प्रचार पर उपस्थित सभा प्रधान डॉ धीरज सिंह

स्वामी–आर्य प्रतिनिधि सभा, उत्तर प्रदेश सम्पादक – मुद्रक –प्रकाशक –श्री स्वामी धर्मेश्वरानन्द सरस्वती, भगवानदीन आर्य भाष्कर प्रेस, 5–मीराबाई मार्ग, लखनऊ के लिए अस्थायी रूप में शारदा प्रिंटिंग प्रेस, माडल हाउस, लखनऊ से मुद्रित एवं प्रकाशित लेखों में वर्णित भाषा या भाव से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है– सम्पूर्ण विवादों का न्याय क्षेत्र लखनऊ न्यायालय होगा।